International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Volume 7 -Issue 12-December -2017,
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 | Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015

आधुनिक भारत में साम्प्रदायिकता : एक अध्ययन

शोधकर्ती
संजू चौधरी
राजनीति विज्ञान विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर (राज.)

प्रस्तावना.

साम्प्रदायिक आधार पर भारत विभाजन के कटु अनुभवों से सबक लेते हुए स्वतंत्र भारत के संविधान में स्पष्टतः एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र घोषित कर व्यवहार में धर्मनिरपेक्षता को जीवन–शैली का मूल सिंद्धान्त बनाया गया। धर्म के इस तत्त्व ने भारतीय राजनीति को बहुत अधिक प्रभावित किया जिसके परिणामस्वरूप देश की राजनीति एवं सामाजिक एकता को गहरा आघात पहुँचा और साम्प्रदायिकता की चुनौती सदैव भारतीय राजनीति के समक्ष एक जीवंत समस्या बनी रही। 1990 के दशक में घटित साम्प्रदायिक घटनाओं जैसे–भाजपा द्वारा हिन्दुत्व का रास्ता चुनना, बाबरी मस्जिद का विध्वंस, बंबई बम ब्लास्ट, गुजरात दंगों का होना आदि ने हमारी लोकतांत्रिक प्रणाली को खतरे में डाला, वहीं हमारे संविधान की मूल धारणा 'धर्मनिरपेक्षता' और 'साम्प्रदायिकता' को लेकर नई बहस को जन्म दिया। बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद हिन्दुत्व, राष्ट्रवाद, साम्प्रदायिकता, धर्मनिरपेक्षता और भगवा जैसे शब्दों का जितनी प्रचुरता से प्रयोग हुआ है उतना पहले कभी नहीं हुआ। ये सब शब्द मात्र नहीं है अपितु भारत जैसे बहुधर्मी देश की एकता, अखण्डता को प्रभावित करने वाली विचारधाराएँ हैं।

साधारण शब्दों में 'साम्प्रदायिकता' का अर्थ वह संकुचित भावना है जिसके द्वारा कोई भी धार्मिक समुदाय अपने राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए अन्य धर्म के हितों की अवहेलना करता है तथा अपने धर्म को श्रेष्ठ बतलाकर दूसरों के धर्म का खंडन करता है इससे विभिन्न धर्मों को मानने वाले लोगों के बीच कट्टरता तथा आपसी नफरत को बढ़ावा मिलता है।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Volume 7 -Issue 12-December -2017,
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 | Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015

''यह ऐतिहासिक तथ्य है कि ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना के पूर्व भारत के दो प्रमुख समुदायों–हिन्दू और मुस्लिम में साम्प्रदायिक संघर्ष के उदाहरण नहीं मिलते''।[1] साम्प्रदायिक समस्या एक आधुनिक परिघटना है। ''साम्प्रदायिक तनाव मध्यकाल में भी मिलते हैं पर साम्प्रदायिक राजनीति का उदय उपनिवेशवाद के दौरान हुआ''।[2] साम्प्रदायिकता को सबसे उपर एक सोच या एक उग्र विचार धारा के तौर पर देखा जाना चाहिए। साम्प्रदायिकता युगो पुरानी समस्या नहीं है इसे 19वीं शताब्दी के भारतीयों ने अपने पूर्वजों से ग्रहण किया है तथा भारतीय राष्ट्रीयता के सामांतर यह उपजी है। भारतीय इतिहास के नजरिये से साम्प्रदायिकता के जन्म और विकास को औपनिवेशिक लेखकों और प्रशासकों ने विकसित तथा प्रचलित किया था। बाद में हिन्दू और मुस्लिम दोनों साम्प्रदायिक तत्त्वों ने इसे अपनाया। साम्प्रदायिकता के जन्म और विकास के लिए धार्मिक अन्तर जिम्मेवार नहीं थे। धर्म साम्प्रदायिकता का मूल कारण नहीं है, यह केवल औजार है। साम्प्रदायिकता के मूल में राजनीति है''।[3] दूसरी ओर भारत जैसे राष्ट्र के लिए साम्प्रदायिक समस्या कोई नई नहीं है। अपितु यह इतनी विकराल समस्या है कि 1947 में भारत के विभाजन की पूरी की पूरी नींव इसी पर आधारित थी और इसके मूल में कहीं ना कहीं राजनीतिक तत्त्व ही सक्रिय थे। पूरे मुस्लिम शासन काल में न तो हिन्दूओं और न ही मुस्लमानों में कोई अखिल भारतीय साम्प्रदायिक चेतना दृष्टिगोचर होती है बल्कि दोनों समुदायों के राजनीतिक तथा आर्थिक सम्बंध साम्प्रदायिक पूर्वाग्रह से लगभग मुक्त मिलते हैं। यह हाल का घटनाक्रम था, जो आधुनिक काल के दौरान जन्मा था पूर्व औपनिवेशिक भारत में यह नहीं पाया जाता। यह एक आधुनिक परिघटना है जो दो प्रमुख सम्प्रदायों के अभिजात वर्ग के बीच राजनीतिक सत्ता और आर्थिक प्रतिस्पर्धा के कारण पैदा हुई है''।[4]

भारत में साम्प्रदायिकता भारतीय राष्ट्रीयता की सहयोगी के तौर पर उभरी है इस समस्या ने दिन–प्रतिदिन गंभीर रूप धारण किया है। वर्तमान समय में लोगों को अपने राष्ट्र की अपेक्षा अपने धर्म के साथ अधिक प्रेम है। लोग धर्म के आधार पर साम्प्रदायिक समूहों में विभाजित किए जा रहे है तथा धर्म के नाम पर अनेक साम्प्रदायिक दंगे–फसाद आए दिन होते रहते हैं। विभिन्न धर्मों के लोगों में साम्प्रदायिक विवाद पैदा होते रहते हैं। सद्भाव की अपेक्षा घृणा तथा अविश्वास कि भावना बढ़ी है और यही देश के विभाजन का

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Volume 7 -Issue 12-December -2017,
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 | Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015

कारण बनीं थी तथा अब भी राष्ट्रीय एकीकरण के मार्ग में एक बहुत बड़ी बाधा बनती नजर आ रही है।

भारत में साम्प्रदायिकता हिन्दू–मुस्लमान के बीच दरार के लिए जिम्मेदार है। यही अन्तराल दोनों समुदायों के मध्य होने वाले दंगों के भड़कने का मूल कारण है। साम्प्रदायिकता की शुरूआत किस प्रकार हुई और उसका भारत के दो प्रमुख धार्मिक समुदायों के जीवन पर बारम्बार पड़ने वाला घातक और हिंसात्मक प्रभाव क्या हैं? प्रख्यात इतिहासकार विपिन चन्द्र ने इसे इन शब्दों में व्यक्त किया है– ''साम्प्रदायिकता यह विश्वास है कि लोगों का एक समूह एक विशेष धर्म का पालन करता हैं, अतः उनके सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक हित भी एक समान हैं। यही वह विश्वास है कि भारत में हिन्दू, मुस्लमान, सिख और ईसाइ लोगों के अलग–अलग और निश्चित समुदाय हैं जो स्वतंत्र रूप से अलग–अलग तरह से संगठित है, कि किसी एक धर्म के सभी अनुयायियों के न केवल धार्मिक हित (अर्थात् सामान्य) बल्कि धर्म निरपेक्ष हित भी एक समान होते हैं और भारत के लोग इन हितों को अनिवार्यतः धार्मिक समूहों की दृष्टि से देखते हैं और उनके मन में धर्म पर ही आधारित पहचान की भावना होती है।''[5]

बाबरी मस्जिद विध्वंस– अयोध्या का प्रश्न इस समय देश के सामने एक केन्द्रिय महत्व का विषय है। 6 दिसम्बर 1992 को अयोध्या में बाबरी मस्जिद को ढ़हा दिया गया जो देश की धर्मनिरपेक्ष पहचान पर एक बदनुमा दाग है। भारत में जो हिन्दु संगठन राम मन्दिर के निर्माण के समर्थक हैं वो बाबरी ढ़ांचे को अपने पूर्वजो की हार और अपमान का प्रतीक मानते थे। मस्जिद गिराने के बाद कुछ कट्टरपंथी हिंदू ताकतों ने इसे 'हिंदू विजय दिवस' के रूप में मनाया। इससे मुस्लिम समुदाय की भावनाओं को काफी ठेस पहुँची। परिणामस्वरूप देश के विभिन्न हिस्सों में हिसंक झड़पो, आगजनी और दंगो के साथ साम्प्रदायिक तनाव उग्र रूप से उत्पन्न हुआ और देश एक बार फिर 1947 की यादों में चला गया।

बाबरी मस्जिद के ढ़हाने वालों का तर्क है कि वे गुलामी के एक प्रतीक को नष्ट कर रहे थे। लेकिन क्या इस तरह इतिहास को पोंछा जा सकता है?''[6] अयोध्या विवाद के

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Volume 7 -Issue 12-December -2017,
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 | Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015

केन्द्र में न मंदिर का सवाल है और न मस्जिद का यह तो हिन्दु–मुस्लिम सम्बंधो को एक खास ढ़ंग से परिभाषित करने की कोशिश का नतीजा है। मुस्लिम द्वेष इसके केन्द्र में है। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ (आरएसएस) भारत को मुस्लिम विहिन देखना चाहता है। आर.एस. एस. और उससे जुड़े संगठनों के लिए ऐसे मुद्दे ही महत्वपूर्ण है जिनके केन्द्र में मुसलमान हैं और ये संगठन हिन्दूत्व को आधार बनाकर कार्य करते हैं। जिससे मुस्लिम समाज में भय का वातावरण पैदा होता है। मुस्लिमों ने नारा दिया कि इस्लाम खतरे में है और मुस्लिम युवा वर्ग में नफरत पैदा की गई तथा उन्हें दंगो के लिए उकसाया गया। इसी तरह का कार्य हिन्दू धर्म में आर.एस.एस., वी.एच.पी., बजरंग दल, भाजपा, शिवसेना आदि संगठनों ने हिन्दुत्व का नारा देकर और हिन्दू युवा वर्ग में साम्प्रदायिकता को विकसित कर किया। समाज में जहर घोलने के कार्य में अनेक मुल्ला मोलवियों, पंडितों, राजनेताओं और नौकरशाहों ने अग्रणी भूमिका निभाई। ''आधुनिक भारत के इतिहास में साम्प्रदायिक समस्या का अर्थ है विभाजन से पूर्व जनसंख्या के 26 करोड़ हिन्दू समुदाय का लगभग 9 करोड़ 40 लाख मुस्लिम समुदाय के साथ सम्बंधों का विश्लेषण''[7]।

बाबरी मस्जिद विध्वंस ने देश में हिन्दू–मुस्लिम समुदायों का धुर्वीकरण किया और राजनीतिक पार्टियों ने अपने–अपने फायदे के लिए इसका प्रयोग किया। देश का सामाजिक वातावरण बिगड़ने लगा, भारत के अनेक स्थानों पर आतंकवादी हमले हुए और दंगे भड़के। दोनों धर्मों के भटके हुए युवा जो बेरोजगारी, अशिक्षा, अंधविश्वास से जूझ रहे थे आसानी से गैर कानूनी गतिविधियों में शामिल होने लगें। मुस्लिम वर्ग को विदेशी आतंकी संगठनों से सहायता प्राप्त हुई और बहुत से युवा मुस्लिम इन संगठनों की ओर आकर्षित हुए तथा देश द्रोही गतिविधियों को संचालित करने लगे। राजनैतिक प्रभुत्व एवं अल्पसंख्यक होकर उपेक्षित होने के खतरे के अतिरिक्त 21वीं शताब्दी में सरकारी नौकरियों में हिस्सेदारी के सवाल ने भी हिन्दू और मुस्लिम अभिजात वर्ग में कटु विवाद पैदा किया।

सभ्यताओं का संघर्ष– हंटिंग्टन ने आशंका व्यक्त की है कि यदि किसी देश के समुदाय वहाँ की प्रधान संस्कृति और मूल्यों को स्वीकार नहीं करते हैं तो वह देश एक द्विसांस्कृतिक समाज में बंट जाता है। सांस्कृतिक विशेषताएँ और विभेद राजनीतिक और आर्थिक विभेदों की तुलना में कम ही परिवर्तनशील है इसलिए उन पर आसानी से न तो

समझौता ही किया जा सकता है और न ही उनका समाधान ही किया जा सकता है। सभ्यता की रचना करने वाले तत्त्वों में भाषा, इतिहास, धर्म, रीति–रिवाज संस्थाओं आदि का उल्लेख होता है किन्तु जब संघर्ष का मामला आता है तो धर्म को अकस्मात ही अधिक महत्व प्राप्त हो जाता है''। आधुनिक युग में प्रमुख सभ्यताओं की मूल्य व्यवस्थाएँ अलग–अलग हैं जिनमें अनेक मतभेद विद्यमान है जो भविष्य में युद्ध क्षेत्र को निर्धारित करेगें। हंटिग्टन की परिकल्पना के अनुसार शीतयुद्ध के बाद संघर्ष का बुनयादीकारण सैद्धांतिक या आर्थिक नहीं होगा अपितु सांस्कृतिक होगा। संसार की नई वैश्विक व्यवस्था में संस्कृतियों के बीच टकराव एक सामान्य बात है और हम अब सभ्यताओं के संघर्ष के युग में प्रवेश कर चुके हैं। ये संघर्ष टाले नहीं जा सकते हैं''।[8]

हिन्दू–मुस्लिम दंगों की तुलना सभ्यताओं के संघर्ष से नहीं की जा सकती है और न ही उनका सम्बंध नस्लवाद के प्रश्न से है। इसका ज्यादा सम्बंध पहचान को लेकर है, उस भय से भी बहुसंख्यक लोग अल्पसंख्यकों का नाश कर देंगें। शेष बात पूर्वाग्रह या पक्षपात की है। धर्मांध और धार्मिकता के प्रति रूझान वाले राजनीतिक दल इसके लिए जिम्मेदार है। जिनका मुख्य प्रेरणार्थक कारक चुनावी प्रतियोगिता है। वोटों को अपने पक्ष में इकट्ठा करने और धर्म के आधार पर अपना निर्वाचक समूह तैयार करने के लिए राजनीतिक गतिशीलता के उद्देश्यों से भारत में राजनीतिक दल 'नस्ल विभेद के मुद्दों' को उठाते हैं। ''साम्प्रदायिक हिंसा धर्मान्धों द्वारा भड़काई जाती है। असामाजिक तत्त्वों द्वारा प्रेरित की जाती है। राजनैतिक सक्रियतावादियों द्वारा समर्थित होती है। निहित स्वार्थ हितों वाले व्यक्तियों द्वारा वित्तीय सहायता दी जाती है तथा प्रशासकों की निष्क्रियता से फैलती है''।[9] धर्म लोगों के लिए अफीम साबित होने के बजाय उन्हें आन्दोलित करने वाली शक्ति भी रही है।

आर्थिक सुधारों का साम्प्रदायिकता पर प्रभाव– औपनिवेशिक काल में अंग्रेजो के षडयंत्रो के कारण भारत औद्योगिक क्रांति का लाभ लेने से वंचित रहा और अपने अतीत से ही जुड़ा रहा। भारत में सामाजिक आर्थिक क्षेत्र में परिवर्तन या तो न्यूनतम हुए या फिर हुए ही नहीं। पश्चिमी सभ्यता की प्रगति का न तो भौतिक और न बौद्धिक क्षेत्र में कोई लाभ मिला।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Volume 7 -Issue 12-December -2017,
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 | Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015

1991 में आर्थिक सुधारों की शुरूआत ने व्यापार की संस्कृति को बदल दिया। आज की अधिक खुली अर्थव्यवस्था में मुनाफा कमाना मुख्य उद्देश्य है। इन आर्थिक सुधारों ने हिन्दू मुसलमान हिंसा को कम करने में प्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डाला है। इसके लिए समग्र विकास दर पर सुधारों का वास्तविक और प्रत्यक्ष प्रभाव दृष्टिगोचर होता है''।[10]

देश में उच्च विकास दर बनी रहती है तो मुसलमान भी अन्य समुदायों के साथ समृद्ध होंगें। सुधारों की पृष्ठभूमि में विकास का स्वरूप धर्मनिरपेक्ष होगा। आय की असमानता को कम करके समतामूलक समाज का निर्माण किया जा सकता है। वर्तमान में हम आर्थिक विकास के नए युग में प्रवेश कर चुके हैं। यदि ऐसा ही विकास होता रहा और इसका स्वरूप समग्र समावेशी रहा, न केवल व्यक्तियों के लिए बल्कि भिन्न–भिन्न समुदायों के लिए उनके बीच का वह तनाव, जो हिसां की ओर जाता है, धीरे – धीरे कम हो सकता है और दंगे इतिहास की बात बन सकते हैं।[11]

क्या धर्म मनुष्य जीवन के लिए आवश्यक हैं?– अनुभव बताता है कि धर्म मनुष्य के जीवन में आवश्यक है। धर्म की दो मुख्य शक्तियाँ हैं– भय और लोभ। व्यक्ति या तो दुखों तकलीफों से डर कर धर्म की ओर आकृष्ट होता है या किसी सुख के लोभ में। इसलिए प्रत्येक धर्मग्रन्थ की शिक्षाएँ नरक का भय और स्वर्ग का प्रलोभन देती हैं। जब तक मनुष्य कमजोर, बेबस और भयभीत है और दुखो तकलीफों का सताया हुआ है तब तक उसे धर्म की आवश्यकता रहेगी। ईश्वर मात्र एक ख्याल ही सही, वह मनुष्य को सांत्वना देता है। मार्क्स ने धर्म को जनता की अफीम इसी अर्थ में कहा था कि वह मनुष्य को अपनी दुख तकलीफें भूलने या उन्हें सहन करने की क्षमता देता है।[12]

धर्म के अन्दर कट्टरता सामाजिक वैमन्स्य पैदा करती है। कट्टरता अपने आप में अज्ञान का प्रतिफलन है। साम्प्रदायिकता राजनीतिक झूठ और दुष्प्रचार पर खड़ी होती है और जनता के एक हिस्से में मौजूद कट्टरता का अपने हित में इस्तेमाल करती है। जहाँ–जहाँ कट्टरता की नीति अपनाई गई, सभ्यता और राजव्यवस्था दोनों का पतन शुरू हो गया। धार्मिक कट्टरता और सभ्य समाज व्यवस्था साथ–साथ नहीं चल सकती। ''जहाँ ज्ञान चूक जाता है वहाँ ईश्वर की सीमा शुरू होती है अर्थात् जब तक अज्ञान रहेगा, तब

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Volume 7 -Issue 12-December -2017,
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 | Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015

तक ईश्वर की सत्ता भी रहेगी। वह दिन सबसे अच्छा होगा जब मनुष्य ईश्वर और धर्म के बिना काम चला सकेगा। धर्म निजी निष्ठा की चीज है जबकि राजनीति का सम्बंध सार्वजनिक जीवन से है।''[13]

इतिहास और साम्प्रदायिकता– अतीत में घटित भंयकर हिंसा के बाद यह कहना पागलपन होगा कि मनुष्य के लिए एक बेहतरीन दुनिया की योजना इतिहास में परिलक्षित होती है बल्कि सच्चाई तो यह है कि कोई सर्वव्यापी इतिहास बर्बरता से मानवता की ओर नहीं ले जाता है''।[14] प्रसिद्ध इतिहासकार राजमोहन गांधी का कहना है कि अतीत को मिटाने की कोशिश में हम वर्तमान पर ही हमला करते हैं। अतीत से तो अतीत में लड़ा जा सकता था अब उस पर गुस्सा करना व्यर्थ है। जलाने पर अतीत जलता नहीं है, जलने मरने वाला वर्तमान और भविष्य है। अतीत तो फरार हो गया है। संघ गिरोह जिस ढंग से अतीत को सुधारना चाहता है, उसके पीछे प्रतिशोध की भावना है और प्रतिशोध के आधार पर किसी भी स्वस्थ समाज की नींव नहीं रखी जा सकती। इससे ऐसा माहौल पैदा होता है जिसमें अतीत के घावों को चूमना और चूम–चूम कर जिंदा रखना होता है''।[15]

यदि हमें दुनिया के लिए एक शांतिपूर्ण समृद्ध भविष्य की कामना को साकार रूप देना है तो सबसे पहले अपने अतीत की सफाई करनी होगी। इतिहास को मांजना होगा। विश्व में आज वही राष्ट्र बुलन्दियों की ओर अग्रसर है जिनका कोई पुराना इतिहास नहीं है या जिन्होनें इसे कबाड़ खाने में दफन कर दिया है। गहराई से सोचे तो क्या यह सच नहीं है कि आज विभिन्न देशों, समाजों, धार्मिक समुदायों, जातियों के बीच जो युद्ध व तनाव की स्थितियाँ बनी हुई हैं उनका कारण अतीत की अनेकों कटू स्मृतियाँ या इतिहास के विद्वेषी प्रसंग नहीं है? देश की सुख शांति व समृद्धि के लिए अतीत की सफाई से बढ़कर और कोई उपाय शायद नहीं है। भारत–पाक विवाद हो या देश के अन्दर साम्प्रदायिक वैमन्सय, आदिवासी हो या स्त्रियों, दलितों के प्रति सामाजिक भेदभाव सभी विवाद देश की भावात्मक एकता और सामाजिक समरसता को छिन्न–भिन्न करने पर उतारू हैं जिनके पीछे इतिहास की स्मृतियाँ हैं।

अन्य देशों ने अतीत से जुड़ी नफरत को मिटाने की कोशिश नई इतिहास पुस्तकों के माध्यमों से की हैं। सैकड़ों सालों तक फ्रांस और जर्मनी दुश्मन रहे, युद्ध हुए लेकिन आज उनके सम्बंध अच्छे हैं। एक दूसरे से लड़े गए युद्धों का संयुक्त इतिहास दोनों देशों के लेखकों ने तैयार किया है। इसलिए इतिहास को अतीत का सच्चा अभिलेख मानकर उससे अपने को बंधक बना देना किसी भी तर्क से सही नहीं माना जा सकता।

हमें एक ऐसा समाज बनाना है जिसका मूल आग्रह–न्याय, समानता, स्वाधीनता और राष्ट्रीयता उत्कर्ष पर हो। ऐसी राजनीतिक आर्थिक सामाजिक व्यवस्था बनाना जिसमें सभी भारतवासी मानवीय गरिमा से युक्त जीवन बिता सकें।

संदर्भ सूचीः–

1. रामलखन शुक्ल सं0, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ–689
2. राम पुनियानी, साम्प्रदायिक राजनीतिः तथ्य और मिथक, पृष्ठ–14
3. असगर अली इंजिनियर भारत में साम्प्रदायिकताः इतिहास और अनुभव, पृ0सं0 45।
4. असगर अली इंजिनियर भारत में साम्प्रदायिकताः इतिहास और अनुभव, पृ0सं0 46।
5. विपन चन्द्र, कम्युनलिज्म इन मॉडर्न इण्डिया (विकास पब्लिकेशन हाउस प्रा.लि. न्यू देहली) 1984 पृ0 1
6. राज किशोर, अयोध्या और उससे आगे (वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2006) पृ0 10
7. राम लखन शुक्ल सं0, आधुनिक भारत का इतिहास, पृ0 689
8. प्रतीप के लाहिरी, भारत में साम्प्रदायिक दंगे और आतंकवाद (राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2012) पृ0 210
9. राम आहूजा, भारतीय समाज, पृ0 247।
10. एम.जे. अकबर, 'आर इकनामिक रिफार्म्स द साल्युशन टू कम्युनल रायट्स? द संडे टाईम ऑफ इंडिया 22 जून 2008
11. प्रतीप के लहिरी, भारत में सांप्रदायिक दंगे और इतिहास, पृ0 51
12. राजकिशोर, अयोध्या और उससे आगे पृ0 103–104

13. राजकिशोर, अयोध्या और उससे आगे पृ0 14
14. सुरेश पंडित, भूमंडलीकरण के दौर में समाज और संस्कृति, शिल्पायन, दिल्ली– 2010, पृ. 21
15. राजकिशोर, अयोध्या और उससे आगे पृ0 27–29